पाण्डुलिपि संरक्षण के विविध उपागम

नवीन जोशी
शोध सहायक
विश्वदीप आश्रम शोध संस्थान

विविध लिप्यासनों पर लिखे लेख पाण्डुलिपि के अन्तर्गत माने जाते हैं । ताडपत्र, कागज, भूर्जपत्र, वस्त्र आदि लिखने के अनेकानेक आधार हो सकते हैं। प्राचीन काल में खड़िया से लिखे जाने वाले लेखपाण्डुलिपि कहलाते थे। खड़िया अथवा पाण्डु से दीवार, पत्थर आदि पर भी लिखा जा सकता है। समय-परिवर्तन के साथ नवीन साधन ताडपत्र, भूर्जपत्र, सांचीपत्र, कागज आदि लेखन के उपयोग में आने लगे। विद्वानों ने जीवनोपयोगी प्रत्येक विषय पर जो चिन्तन, मनन अथवा अन्वेषण किया, उसे भावी पीढी तक पहुँचाने के लिए लिपिबद्ध कर दिया। उन ज्ञाताओं के अनुभव, चिंतन एवं परिश्रम को बचाना हमारा प्रथम कर्त्तव्य है। इसी विचार को दृष्टिगत रखते हुए राजाओं एवं श्रेष्ठिवर्ग ने पाण्डुलिपि लिखने वालों का सम्मान किया। पाण्डुलिपि की सुरक्षा के लिए अपने अपने राज्यों में पुस्तकालय स्थापित किये। राजस्थान के प्रत्येक रजवाडों ने लेखकों, विद्वानों एवं रचनाओं को संरक्षण एवं सुरक्षा प्रदान की। जयपुर राजा का पोथीखाना बीकानेर महाराज का अनूप पुस्तकालय इसके उदाहरण है।

पाण्डुलिपियों की सुरक्षा में स्वतन्त्रता के बाद राजस्थान सरकार का भी सराहनीय योगदान रहा है। जिसके द्वारा राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान की स्थापना का उद्देश्य प्राचीन ज्ञान-विज्ञान का संरक्षण, सवंर्धन एवं प्रोत्साहन रहा है। पाण्डुलिपियों के संरक्षण में राजस्थान संस्कृत अकादमी, श्री संजय संग्रहालय शोध संस्थान, राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन आदि के प्रयास भी प्रंशसनीय है। हमारे पास सुरक्षा के सम्पूर्ण साधन होते हुए भी धूल के कण, ताप, दीमक, आर्द्रता, ग्रीष्म, शरद, प्रकाश, वायुमण्डलीय गैसें, कीटाणु, अग्नि, भूकम्प आदि पाण्डुलिपियों को हानि पहुँचाते हैं, विविध प्रकार की पाण्डुलिपियों का रख रखाव भी अलग अलग प्रकार से किया जा सकता है। डॉ. गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझा के अनुसार दक्षिण की अधिक ऊष्ण वायु में ताडपत्र की पुस्तकें अधिक समय तक नहीं रह सकती, जितनी कि नेपाल आदि शीत देशों में रह सकती है। यही कारण है कि उत्तर में नेपाल में ताडपत्र पुस्तकें अच्छी स्थिति में प्राप्त होती है। यही स्थिति भोजपत्र पर लिखी पुस्तकों की है। भूर्जपत्र पर लिखी अधिकांश पाण्डुलिपियाँ कश्मीर में मिलती है।

ताडपत्र भूर्जपत्र आदि यदि कहीं स्तूप आदि में या पत्थरों के बीच बहुत भीतर दबा कर रखें जाएँ तो कुछ अधिक काल तक सुरक्षित रह सकते हैं। ऐसे खुले ग्रंथ चौथी, पाँचवीं शताब्दी से पूर्व के नहीं मिलते। डा. ओझा के

अनुसार भारतवर्ष की जलवायु में कागज बहुत अधिक काल तक नहीं रह सकता। ताड़पत्र, भूर्जपत्र या कागज आदि यदि बहुत नीचे या बहुत भीतर दबा कर रखे जाये तो दीर्घजीवी हो सकते हैं, किन्तु यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि ऐसे दबे हुए ग्रंथ भी प्रथम द्वितीय ई. से पूर्व के नहीं मिलते। इसका एक कारण तो भारत पर विदेशी आक्रमण का चक्र हो सकता है। ऐसे कितने ही आक्रमणकारी भारत आये, जिन्होंने मन्दिरों, मठों, पुस्तकालयों, नगर-बाजारों को नष्ट और ध्वस्त कर दिया तथा उन्हें आग को समर्पित कर दिया। तक्षशिला में पुस्तकालय की अग्नि को कैसे भुलाया जा सकता है, जिसकी लपटें आज दिन तक हम अनुभव कर सकते हैं। जिन भारतीयों का पाण्डुलिपियों के प्रति अज्ञानतावश मोह नहीं था उन लोगो ने उन्हें अग्नि की गोद में डाल दिया, पानी में बहा दिया गया, कचरा समझ कर किसी गडढें में डाल कर कीटों की भोज्य सामग्री बना दिया ।

महत्वपूर्ण साहित्य-सम्पदा विदेशों में कोडियों के भाव बेच दी गयी। अपरोक्ष रूप से पुजारी भी शत्रु कहे जा सकते हैं क्योंकि यदि वे पढ़े लिखे नहीं हैं, तो वे यह भी जानते हैं कि मन्दिर में जो पुस्तकें पड़ी हैं वे किसी देवता से सम्बन्धित हैं। प्रमुख धार्मिक पुस्तक देवता कि आगे रख दी जाती है। जब मूर्ति का जलाभिषेक किया जाता है तो उसके छींटे पुस्तक पर भी पड़ जाते हैं और वह पुस्तक सीलन से भर जाती है तथा उससे दीमक लग जाती है और कीटाणु लगने से पुस्तक रुग्ण हो जाती है। मठाधीशों में भी लोभवश महत्वपूर्ण ग्रंथ रद्दी के भाव बेच दिये गए। अर्थ व साधनों के अभाव में निजी पुस्तकालयों में भी पुस्तकें सुरक्षित नहीं रह पाती।

जहाँ मन्दिर ट्रस्ट के अधीन है, वहाँ जब तक ट्रस्टी एक जगह एकत्र हो कर निर्णय नहीं करते तब तक वहाँ के ग्रन्थागार खुल नहीं पाते और बन्द पड़े रहने से उनकी सुरक्षा नहीं हो पाती। राजकीय उथल-पुथल, पाठक की लापरवाही, बाह्य वातावरण भी पाण्डुलिपियों के शत्रु रहे हैं। 'भारतीय जैन श्रमण संस्कृति एवं लेखन कला' के लेखक मुनि श्री पुण्यविजय जी ने पुस्तकों और ज्ञान भण्डारों के रक्षण की आवश्यकता निम्नलिखित चार कारणों से बतायी है:-

1. राजकीय उथल-पुथल
2. वाचक की असावधानी
3. मूषक, कसारी आदि जीव जन्तु के आक्रमण
4. बाहरी प्राकृतिक वातावरण

1. मुनि पुण्यविजय यह जानते हैं कि बड़े मन्दिरों में भूगर्भस्थ गुप्त स्थान बड़ी मूर्तियों को सुरक्षित रखने के लिए ही होते थे, लेकिन मन्दिरों में बने ये गुप्त स्थान राजनैतिक उथल-पुथल के समय न केवल मूर्ति आदि मन्दिर की

सम्पत्ति अपितु उनके ग्रंथ-भण्डारों को भी सुरक्षित करने में उपयोगी बने। कुछ ग्रन्थ भण्डारों के तहखानों में होने के प्रमाण कर्नल टाड द्वारा भी प्रस्तुत किये गये हैं।

2. वाचकों और पाठकों की असावधानी से बचने के लिए जो बातें की जाती थीं उनमें से एक तो यह है कि वाचकों के ऐसे संस्कार बनाये जाते थे, जिनसे वे पुस्तकों के साथ प्रमाद न कर सकें। इसी सांस्कृतिक शिक्षण की व्याप्ति भारत के घर-घर में देखी जा सकती है, यथाः जहाँ लिखने पढने की कोई वस्तु, पुस्तक, स्याही आदि जमीन पर कहीं गिर जाये या अशुद्ध स्थल पर गिर जाये, अशुद्ध हाथों से छू जाये तो उसे पश्चात्ताप के भाव से सिर से स्पर्श कर यथास्थान रखने की परम्परा आज भी प्राप्त होती है। पुस्तकों को पढने के लिए चौकी अथवा सम्पुटिका का उपयोग किया जाता था। इससे पुस्तक का जमीन से स्पर्श नहीं होता था।

3. मूषक, कसारी तथा अन्य जीव जन्तुओं से रक्षा के लिए मुनि पुण्यविजय के अनुसार प्राचीन जैन परम्परा में घोडाबद्ध या संस्कृत, उग्रगंधा पुस्तकों अथवा पाण्डुलिपियों को एक गठरी में बांध कर उसका इस प्रकार का नामकरण कर दिया जाता था। पुस्तकों के संग्रह को पेटियों में रख दिया जाता था। उनके संरक्षण हेतु कपूर का प्रयोग भी किया जाता था। यह विधान था कि पुस्तको को दोनों ओर से दावडों से दबा कर पुटठों गत्ता या आवरण पृष्ठ को पार्श्वों में रख कर पूर्ण कस कर बांध दें। फिर इन्हें बस्तों में बांध कर पेटी में रख दें।

4. धूप में ग्रंथ नही रखने चाहिए। यदि वर्षा की नमी हो तो भी गर्भस्थान पर धूप से बचाकर ग्रंथों को रखना चाहिए। नमी के कारण कई बार पृष्ठ चिपक जाते है। ऐसा स्याही बनाते समय गोंद के अधिक प्रयोग के कारण होता है। नमी से बचने के लिए एक उपाय तो यही बताया गया है कि पुस्तक को बहुत कस कर बांधना चाहिए, इससे कीडे मकोड़ों से ही रक्षा नही होगी अपितु वातावरण के प्रभाव से भी बच जाते है, पृष्ठों पर गुलाल छिडकने से ये आपस में चिपकते नही है। चिपके पन्ने अलग करने के लिए आवष्यक नमी युक्त हवा देने से, अथवा वर्षा की नमी का उपयोग करने से उन्हे आसानी से दूर किया जा सकता है। बाद में गुलाल छिडक देना चाहिए। ताडपत्र की पुस्तकों के चिपके पन्नों को अलग-अलग करने के लिए भीगे कपडे को पुस्तक के चारों ओर लपेटकर अपेक्षित नमी पहुचायी जाए और पन्ने जैसे-जैसे नम होते जायें, उन्हें अलग कर लेना चाहिए।

भारत में प्राचीन काल से ही ग्रन्थों की रक्षा के प्रति बहुत सचेष्ट दृष्टि थी। इसके लिए उपयुक्त स्थान के चुनाव, उनको आक्रमणकारी की दृष्टि से बचाने के उपाय, उनके रख-रखाव में अत्यन्त सावधानी तथा पूज्यभाव उत्पन्न करने के प्रयास किये जाते थे। ग्रंथों की सुरक्षा के लिए उन्हे थैलीनुमा बस्तों में रखा जाता था। महत्वपूर्ण कागज पत्रों को रखने के लिए भारत में भी लोहे या टीन के ढक्कन वाले खोखों का उपयोग कुछ समय पूर्व तक होता रहा है। आधुनिक

वैज्ञानिक युग में पाण्डुलिपियों की सुरक्षा के बहुत उपयोगी साधन उपलब्ध हुए हैं। इन साधनों के कारण हस्तलेखागारों की उपयोगिता का क्षेत्र भी बढ़ गया है। क्षेत्र को बढ़ाने वाले साधनों में दो प्रमुख है 1. माइक्रोफिल्म, 2. फोटोस्टेट

1. माइक्रोफिल्म के एक फीते पर कई हजार पृष्ट उतारे जा सकते हैं। इन फीतों को छोटे से डिब्बे में बन्द कर रखा जा सकता है। माइक्रोफिल्म की सुरक्षा की वैज्ञानिक विधियाँ भी होती हैं।

2. इसी प्रकार फोटोस्टेट यंत्र से ग्रन्थ की फोटो प्रतियाँ निकाली जा सकती हैं। ये ग्रंथ प्रतियाँ यथार्थ की भाँति ही उपयोगी मानी जा सकती हैं। ग्रंथों की रक्षा के लिए ग्रंथ के अन्त में प्रणेता अपील कर उल्लेख करता था कि मैंने यह पुस्तक बड़े कष्ट से लिखी है, इसे चोरो से बचाकर रखें। जितना प्रयत्न इन्हें सुरक्षित रखने में कर सकते हैं, करें। जल से इसकी रक्षा करें, भूमि पर न रखें, ग्रंथ को किसी बक्से में बांधकर रखें। बस्ते का बन्धन शिथिल न हो, अपितु दृढबन्धन हो। लिखते समय मेरी पीठ और गर्दन झुके रहें, दृष्टि भी झुकी हुई है और जब इतना कष्ट मैंने पाया है तो थोड़ा कष्ट इसकी सुरक्षा का आप भी कीजिए।

ग्रन्थों की रक्षा के लिए नगरों से दूर ग्रन्थागार बनाये जाते थे, ताकि विदेशी उन्हें नष्ट न कर सकें। ऐसे स्थानों पर ग्रंथ रखे जाए, जहाँ भूकम्प की सम्भावना कम हो। भोज्य सामग्री से उन्हें दूर रखना चाहिए।

ग्रंथ को बस्ते में बाँधने से पूर्व दोनों ओर रखा कागज लपेट कर कार्डबोर्ड लपेटना चाहिए। कपूर, मोरपंख, घोडावत्स नामक औषधि का टुकडा, सांप की कैचुली आदि का प्रयोग कीटाणुओं से रक्षा के लिए किया जाता था।

बाह्य वातावरण व कीट पतंगों से ग्रंथों की रक्षा के लिए कुछ उपाय आवश्यक है।

पाण्डुलिपि बचाव के उपाय- ग्रंथ भण्डारण भवन को 22 डिग्री से 25 डिग्री से. (72डिग्री से 78 डिग्री फा.) के बीच तापमान और नमी 5 और 55 प्रतिशत के बीच रखा जाए।

वातानुकूल यन्त्र द्वारा वातानुकूलित भवन में उक्त स्थिति रह सकती है, बहुत व्यय-साध्य होने से यदि यह सम्भव न हो, तो अत्यधिक नमी को नियन्त्रित करने के लिए जल-निष्कासन रासायनिकों का उपयोग कर सकते हैं। जैसेः- ऐल हाइडस, कैल्सियम क्लोराइड और सिलिका गेल 20-25 घन मीटर क्षमता के कक्ष के लिए 2-3 किलोग्राम सिलिका गेल पर्याप्त है। इसे कई तश्तरियों में भर कर कमरें में कई स्थानों पर रख देना चाहिए। 3-4 घंटे के बाद सिलिका गेल और नमी नहीं सोख सकेगा, क्योंकि वह स्वयं उस नमी से परिक्षरित हो चुका होगा, अतः सिलिका गेल की दूसरी मात्रा उन तश्तरियों में रखनी होगी। सिलिका गेल को गर्म करके दुबारा काम किया जा सकता है इसके साथ ही भण्डारण भवन बनाते समय सीलन का ध्यान रखना चाहिए और सीलनमुक्त विधि का प्रयोग करना चाहिए।

नमीऔर सीलन को कम करने में खुली स्वच्छ वायु का उपयोग भी लाभप्रद होता है, अतः भण्डारण में खिड़कियाँ आदि इस प्रकार बनायी जानी चाहिए, कि भण्डार की वस्तुओं को खुली हवा का स्पर्श लग सके। कभी-कभी बिजली के पंखों से भी हवा की जा सकती है।

भण्डारकक्ष की वस्तुओं पर सीधी धूप नहीं लगनी चाहिए। पाण्डुलिपियाँ रखने की आलमारियाँ खुली होनी चाहिए, जिससे उन्हें खुली हवा लगती रहे और सीलन न भरे। आलमारियाँ लोहे अथवा धातु की बनी हों, उन्हें दीवार से सटा कर न रखा जाय। दीवारों में बनायी सीमेन्ट की अलमारियाँ ठीक नहीं होती।

यदि भण्डारण कक्ष को उक्त मात्रा में तापमान और नमी का अनुकूलन सम्भव न हो, तो थाईमल रसायन से वाष्पचिकित्सा करनी चाहिए। इसके लिए वायुविरहित अलमारी या बॉक्स ले कर उसके नीचे के तल से 15 से.मी. की ऊँचाई पर तार के जालों का एक बस्ता लगायें, उस पर ग्रंथ को खोल कर रखें जिससे पीठ ऊपर रहे। थाइमल वाष्प् चिकित्सा के लिए जो ग्रंथ इस यंत्र में रखे जायें, उनमें अवयवाणुओं ने जहाँ घर बनाये हों, उन्हें साफ कर दें। सफाई कर फफूंदी आदि एक पात्र में इकटठी कर जला दी जाय। इसके बाद ग्रंथ को यंत्र पर रख 40-60 वाट के विद्युत लैंप की गर्मी से गर्म कर पाण्डुलिपियों को वाष्पित करें। एक क्यूबिक मीटर के लिए 100-150 ग्राम थाइमल ठीक रहता है। 6-10 दिन तक पाण्डुलिपियों को वाष्पित करना होगा और प्रतिदिन दो से चार घंटे विद्युत लैम्प जला कर वाष्पित करें। इससे ये सूक्ष्म अवयवाणु मर जाएँगे लेकिन उनके कारण पड़े धब्बे नही मिटेगे।

नमी को 75 प्रतिशत से कम करने का साधन न हो वहा मिथिलेटेड स्पिरिट में 10 प्रतिशत थाइमल का घोल बनाकर सांयकाल ग्रन्थागार में छिड़क कर खिड़की दरवाजे बंद कर दे। इससे फफूंद आदि पैदा करने वाले सूक्ष्म जीवाणु नष्ट हो जाएँगे।

पाण्डुलिपियों के शत्रु

भुकडी और फफूँद नामक दो शत्रु हैं जो पाण्डुलिपियों में ही पनपते है। फफूँद तो पुस्तकों में पनपने वाला वनस्पतीय फंगस होता है। जबकि भुकडी में शेष सभी अन्य सूक्ष्म अवयवाणु आते हैं, जो पाण्डुलिपियों में हो जाते हैं। 45 से. से अधिक तापमान में इनमें से बहुत सारे नष्ट हो जाते हैं। इन्हे रोकने के लिए ग्रन्थाकार का तापमान 22-24 से. तक रखा जाना चाहिए। साथ ही नमी 45-50 प्रतिशत के बीच रखनी चाहिए।

कई प्रकार के कीड़े मकोड़े भी पाण्डुलिपियों और ग्रंथों को हानि पहुँचाते हैं। ये दो प्रकार के मिलते हैंः एक प्रकार के कीट तो ग्रंथ के ऊपरी भाग को, जिल्द आदि को, जिल्दबन्दी के ताने-बाने को, चमडे को, पुटठे आदि को

हानि पहुँचाते हैं। इनमें एक तो कोक्रोच, दूसरे हैं रजत कीट (सिल्वर फिश) यह कीट बहुत छोटा, पतला चांदी की तरह चमकदार इनकी संख्या में वृद्धि न हो ऐसा प्रयत्न करना चाहिए। भण्डारगृह में खाने-पीने की वस्तुएँ नहीं आनी चाहिए। इनके आकर्षित होकर ये फलते - फूलते हैं। दीवारों की दरारों को भरवा देना चाहिए। इसके साथ ही नेप्थलीन की गोलियाँ अलमारियों में हर छः फीट पर रख दी जावे, इससे ये कीट भागते है। इन कीटों से पूर्ण मुक्ति के लिए डी.डी.टी. सोडियम फलोराइड आदि का छिड़काव करना चाहिए किन्तु सीधे छिड़काव करना अनुचित है।

ये कीट तो ऊपरी सतह को ही हानि पहुँचाते हैं, पर दो ऐसे कीट हैं, जो ग्रंथ के भीतरी भाग को भी नष्ट करते हैं। इनमें से एक है, पुस्तक कीट तथा दूसरा सोसिड है। ये दोनो कीट ग्रंथ के पन्नो को ऊपर से लेकर दूसरे छोर तक छेद कर देते है और गुफाएँ फोड़ देते है। लाखा जब उड़ने लगता है, तो दूसरे स्थानों पर पुस्तककीटों को जन्म देता है। सोसिड पुस्तक को भीतर ही भीतर नुकसान पहुँचाते हैं।

पुस्तकों को सबसे ज्यादा नुकसान दीमक से होता है। इसका घर भूगर्भ में होता है। वहाँ से चल कर ये मकानों में लकडी, कागज आदि पर आक्रमण करती हैं। यह अपना मार्ग दीवारों पर बनाती है, जो मिट्टी से ढकी छोटी-पतली सुरंगों के रूप में दिखायी पड़ता है, ये पुस्तकों को भीतर बाहर सब ओर से खाती है। इन्हें नष्ट करने की बजाय घर में प्रवेश के मार्ग को अवरुद्ध करना चाहिए। कोलतार, सफेद सांखिया, डी.डी.टी., सोडियम, आर्सोनिक का प्रयोग इससे बचाव करता है, इसके साथ ही भण्डारण के स्थान को धूल, मकड़ी के जालों एवं गन्दगी से रहित स्वच्छ रखना चाहिए।

पाण्डुलिपियों का चिकित्सा कार्य

पाण्डुलिपियों के रख-रखाव में न केवल शत्रुओं से रक्षा जरूरी है, अपितु पाण्डुलिपियों को ठीक रूप में और स्वच्छ दशा में रखना भी इसी का एक अङ्ग है। जब पाण्डुलिपियाँ कहीं से प्राप्त होती हैं तो उनमें से बहुतों की दशा विकृत होती है। पाण्डुलिपियों की ये विकृतियाँ कई प्रकार की होती हैं-

1. कटे-फटे स्थल या किनारें।
2. किनारे, गुडे-मुडे हुए कागज
3. सिकुडे सिलवट युक्त कागज
4. तड़कदार या कुरकुरे कागज
5. पानी से भीगे अथवा नमी युक्त पत्र
6. आपस में चिपके हुए पृष्ठ

7. धुँधले एवं अस्पष्ट लेख
8. जले हुए पृष्ठ
9. कागजों पर मुहरों की विकृतियाँ।

पाण्डुलिपियों में प्राप्त होने वाली इन विकृतियों के सुधार अथवा चिकित्सा का प्रयास करना चाहिए। चिकित्सा के लिए आवश्यक वस्तुओं का विवरण प्रस्तुत करते हुए डा. सत्येन्द्र ने 17 वस्तुओं का विवेचन किया है।

1. मेज जिस पर ऊपर शीषा जुडा हो।
2. छोटी प्रेस (दाब देने के लिए)
3. पेपर ट्रीमर
4. कैंची (बड़ी साइज)
5. चाकू
6. पारिंग चाकू
7. प्याले (पीतल या इनामिल किये हुए)
8. तश्तरिया (पीतल या इनामिल किये हुए)
9. ब्रश (ऊँट के बाल के 2.5-1.25
10. फुटा (स्कैल)
11. सुइया (बड़ी या छोटी)
12. पेपर कटिंग स्लाइस सींग के बने हो तो अच्छा है।
13. बोदकिन छेद करने के लिए
14. तख्त इनामिल किये हुए
15. शीषे की प्लेंटे
16. देगची लेई बनाने के लिए
17. बिजली की प्रेस ;प्तवदद्ध

चिकित्सा में अन्य अपेक्षित सामग्री

1. हाथ का बना कागज
2. ऊलि (टिशु पत्र)
3. शिफन नालिवसन
4. तैल कागजया मोनी कागज
5. मलमल
6. लंक लाट
7. सैल्यूलोज एसीटेट फायल